इकाई 5 राज-प्रासाद की सज्जा

इकाई की रूपरेखा

5.1 उद्देश्य

5.2 प्रस्तावना

5.3 राज-प्रासाद सज्जा

5.3.1 राज-प्रासाद के मनोरञ्जन के साधन

5.3.2 राजगृह सज्जा

5.3.3 राजसज्जा के लिए रखने योग्य एवं ना रखने योग्य वस्तुएँ

5.4 सारांश

5.5 शब्दावली

5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

5.8 बोध प्रश्न

5.1 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आपः

- राजसज्जा के बारे में जान सकेगें।
- राजसज्जा के लिए प्रयोज्य अथवा अप्रयोज्य वस्तुओं के बारे में जान सकेगें।
- राजसज्जा कितनी प्रकार की होती है इस विषय से अवगत होगें।
- राजसज्जा का राजा तथा प्रजा के जीवन में क्या महत्त्व है इस विषय से लाभान्वित होगें।
- सज्जा के समय किन – किन बातों को ध्यान में रखकर सज्जा करनी चाहिये इस विषय से परिचित होगें ।

5.2 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई के माध्यम से हम जानने का प्रयास करेगें कि राजसज्जा किस प्रकार से होती थी एवं उसके कितने प्रकार होते थे और उस सज्जा का हमारे जीवन में किस प्रकार से महत्त्व है तथा उनमें होने वाले प्रयाज्य वस्तुएं वास्तु सम्मत है या नही है इसका भी विचार करना चाहिये इत्यादि विषयों को हमे जानना चाहिये कि राजसज्जा के अलाव अन्य लोगों के जीवन में उस सज्जा का क्या महत्त्व है । इस पाठ्यांश में समझने का प्रयास करेगें, राजसज्जा के महत्त्वपूर्ण विषय है। राजा के लिए उससे केवल वह अपने महल को ही नही अपने महल में रहने वालों का भी ध्यान रख सकता है। क्योंकि प्रयोज्य वस्तु जो वास्तुसम्मत है, यदि उनका वह अपने राज्य की सज्जा में प्रयोग करता है तो वह एक सुखीजीवन का अनुभव करने के साथ-साथ

अन्य सदस्यों को भी एक अच्छा जीवन एवम् सुखीजीवन दे सकता है। क्योंकि हर प्राणी सुखी जीवन चाहता है। परन्तु यदि व्याधिविहीन जीवन जीना है तो वास्तुयुक्त प्रयोज्य वस्तुओं का प्रयोग करके बताए गये भवनों में ही सुखीजीवन यापन हो सकता है।

5.3.1 राज-प्रासाद के मनोरञ्जन के साधन

राज-प्रासाद निर्माण के साथ उसकी सजावट किस तरह से हो , इसका आचार्यो ने बहुत जगह उल्लेख किया है क्योंकि उस भवन की सज्जा अथवा सुन्दरता एक राजा के लिए बहुत ही उपयोगी वस्तु है। वह राजा के स्वभाव में होता है राजा हमेशा अपने आस – पास की वस्तुयें ऐसी रखता है जो सुन्दर हो वही वास्तुशास्त्र की भाषा में सज्जा नाम से जाना जाता है। राजभवन के आस – पास राजा सुन्दर बाग – बगीचे , नदी, उद्यान आदि का निर्माण करवाये, जिससे की राजभवन की सुन्दरता और बड़ जाये तथा राज-प्रासाद हो। वास्तुविद् कहते हैं कि ये केवल सज्जा के साधन नही होते बल्कि वास्तु के दोषों को भी शान्त करने में सहायक होते है। तथा राज-प्रासाद के आस – पास उन वृक्षों को लगवाना चाहिये जो वास्तुशास्त्र में प्रशस्त वृक्ष कहे गये हैं, यदि उनके विरुद्ध वृक्षों का रोपण करते हैं तो वे वास्तुदोषों को शान्त न करके, उत्पन्न करते हैं इसलिये राजा अपने वाटिका , उद्यान, आदि के निर्माण के समय वास्तुविदों के परामर्श के द्वारा ही उद्यान , नदी , वाटिका आदि के निर्माण के समय शुभाशुभ वृक्षों को ध्यान में रखकर उसका निर्माण करवाए।

ग्राह्यवृक्ष ये बताये गये हैं -

वृक्षा दुग्ध सकण्टकाश्च फलिनस्त्याज्या गृहाद् दूरतः
शस्ते चम्पकपाटले च कदली जाती तथा केतकी।

यामादूर्ध्वमशेषवृक्षजनिता छाया न शस्ता गृहे
पार्श्वे कस्य हरे रवीशपुरतो जैनानु चण्डयाः क्वचित्॥
(बृहद्वास्तुमाला-गृहप्रवेश प्रकरण -9, पृष्ट-125)

राजा को अपने राजमहल के आस-पास जब भी उद्यान, वाटिका आदि का निर्माण करवाना हो तो इन सब को ध्यान में रखकर करना चाहिये। अपने प्रासाद के आस – पास दूध वाले , काँटे वाले वृक्ष को भी अच्छा नहीं माना गया यदि भवन के आस – पास ऐसे वृक्ष हो भी तो कटवाने चाहिये। इनके अलावा चम्पा, गुलाब, केला , जाती, केवडा ये शुभ होते हैं। यदि एक पहर के यदि उस भवन पर वृक्ष की छाया पड़ती हो तो भी शुभ नही माना गया है तथा राजा हो या अन्य कोई भी व्यक्ति यदि ब्रह्मा के मन्दिर के पास , विष्णु, सूर्य, शिव-मन्दिर के सामने, जैन मन्दिर के पीछे तथा देवी मन्दिर के किसी भी भाग में गृह निर्माण करना चाहिये। सब का ध्यान में रखकर ही उद्यान, वाटिका आदि का निर्माण करवाना चाहिये, इनके अलावा बहुत से साधन इस प्रकार से बताये गये हैं।

जैसे –

क्रीडावाटिका – राजगृह के वाम अथवा दक्षिण भाग में मनोरञ्जन के लिए तीन प्रकार की वाटिका का उल्लेख मिलता है। राजा को चाहिये की इन वाटिकाओं का निर्माण वास्तुविधि के अनुकूल करे। ये वाटिका इस प्रकार से बताई गई हैं। प्रथम वाटिका राजगृह के पास 100 दण्ड

से निर्मित करनी चाहिये, उस वाटिका के मध्य भाग में जलयन्त्रों (फव्वारों) का निर्माण करना चाहिये। द्वितीय वाटिका 200 दण्डों से निर्मित करनी चाहिये, उसके भी मध्य भाग में जलयन्त्रों के साथ-साथ वृक्षारोपण भी करना चाहिये। तृतीय वाटिका 300 दण्ड की बताई है जिससे की यह ज्ञात होता है कि प्राचीन काल के राजा भी उन जलयन्त्रों का निर्माण करवाते थे जिससे की राजसज्जा के साथ-साथ मनोरञ्जन भी हो सके जैसे –

वामे भागे दक्षिणे वा नृपाणां त्रेधा कार्या वाटिका क्रीडनार्थम् ।
एकद्वित्रिदण्डसंख्याशतं स्यान्मध्ये धारामण्डपं तोययन्त्रैः ।।
(वास्तुसार अध्याय-9-1) वास्तुराज वल्लभ-9-18

जहाँ पर हम वाटिका के मध्य भाग में जलयन्त्रों का निर्माण कर रहे हैं उस क्षेत्र को सात भागों में पहले विभाजित करना चाहिये, उसके तीन भागों में भद्र एवं मध्य भाग में जलयन्त्र चौबीस पद का बनाना चाहिये। उसके एक भाग में वेदिका का निर्माण तथा उस स्थान के कोणों पर कूपों का निर्माण तथा उस स्थान के मध्य भाग में बारह(12) स्तम्भों का निर्माण करना चाहिये इन सब का ध्यान में रखकर राजा को विधिपूर्वक अथवा वास्तुविधिपूर्वक सुख के उपभोग एवं मनोरञ्जन साधन के रूप में इन जलयन्त्रों का निर्माण करना चाहिये जैसे-

क्षेत्रं सप्तविभागभाजितमतो भद्रं च भागत्रयं
तन्मध्ये जलवापिका जिनपदैरेकांशतो वेदिका ।

स्तम्भैर्द्वादिशभिश्च मध्यरचितः कोणेषु कूपान्वितः
कर्तव्यो जलयन्त्र एष विधिवद् भोगाय पृथ्वीभुजाम् ।।
(वास्तुसार अध्याय-9-2) वास्तुराजवल्लभ-9-19)

राज-प्रासाद के पास वाटिका में किन-किन वृक्षों को लगाना चाहिये आचार्य मण्डनसूत्रधार कहते है –

तस्यां चम्पककुन्दजातिसुमनो वल्ली च निर्वालिका
जाती हेमसमानकेतकिरपि श्वेता तथा पाटलाः ।

नारिङ्गः करणो वसन्तलतिका चारक्तपनुष्पादिकं
जम्बीरो बदरी च पूगमधुपा जम्बुश्च चूतद्रुमाः ।।

मालूरः कदली च चन्दनवटा अश्वत्थपथ्याः शिवा
चिञ्चाशोककदम्बनिम्बतरवः खर्जूरिका दाडिमी ।

कर्पूरागुरुकिंशुका हयरिपुः पुन्नागको निम्बुकी
प्रोक्ता नागलता च बीजनिभृता स्यात् तिन्दुकी लाङ्गली ।।

द्रोक्षैला शतपत्रिका च बकुला धत्तूरकङ्कोलकौ
शालस्तालतमालकौ मुनिवरो मन्दारपारिद्रुमौ ।

अन्ये भोग्यविचित्रखाद्यसुफलास्ते रोपणीया बुधैर्यान्

प्राप्नोति च भूतले शुभतरून् तच्चम्पकान् वापयेत् ॥
(वास्तुसार अध्याय -9-श्लोक 3-5)

राजा जब भी अपने राजमहल के आस-पास वाटिका अथवा उद्यान आदि का निर्माण करवाये तब इन बातों को ध्यान में रखकर करना चाहिये कि वृक्ष एवं लताओं जो वास्तुभास्त्र में प्रशस्त बताई गई है जैसे उपरोक्त श्लोक में चम्पा , कुन्द, चमेली लता , निर्वालिका, जाती, पीले रंग की केतकी, श्वेता, गुलाब, नारंग, कनेर, वसन्तलता, लालपुष्प, जम्बीरी नींबू, बेर, सुपारी महुआ, आम, बेल, केला, चन्दन , बरगद , पीपल, हरीतकी, आंवला , इमली, अशोक, कदम्ब, नीम, खजूर, अनार, कपूर, अगरु, किंशुक, सफेद कनेर, जायफल, नीबू, नागबेल, बिजौरा , तिन्दुकी, लांगली, अंगूर, इलायची , शतावरी, मौलसिरी, धतूरा, कंकोल, शाल, ताल, तमाल, अगस्तिया, मदार पारिजात, तथा इस धरती पर जितने भी सुखोपभोग के वृक्ष बताये गये है उन सब का राजा को अपनी वाटिका में रोपण करना चाहिये जिससे की सुख की अनुभूति हो सके केवल राजा को ही नहीं परन्तु उसमे आने वाले प्रजाजनों को भी सुखोपभोग का अनुभव हो सके।

आमोदवाटिका का निर्माण – राजा को विशेष रूप से आमोद-प्रमोद के लिए भी एक वाटिका का निर्माण करना चाहिये। जिससे राजमहल में रहने वाली स्त्रियों भी इन वाटिकाओं में सुख की अनुभूति कर सकें। जिस तरह से राजा वाटिका का निर्माण सामान्य रूप से करवाता है, उसी तरह से इन आमोदादि वाटिकाओं के विषय में भी बताया गया है। जैसे –

आस्थानं प्रतिसेचनाय च घटीयन्त्रः सुसारो भवेत्
दोला स्त्रीजनखेलनाय रुचिरे वर्षावसन्तोत्सवे।

बालाप्रौढवधूसुमध्यवनितागानैर्मनोहारिभिः
ग्रीष्मे शारदके सुशीतलजले क्रीडा शुभे मण्डपे ॥
(वास्तुसार-अध्याय-9-6)

राजा को सींचाई की सुगमता के लिये घटीयन्त्र(रहट) आवश्य ही वाटिका में लगाना चाहिये यदि घटीयन्त्र को वाटिका में नही लगाया गया तो उस वाटिका में लगायें गये पुष्प, वृक्षादि सुखने लग सकते हैं इसलिये इनको ध्यान में रखकर घटीयन्त्र लगाना चाहिये, एवं स्त्रियों के आमोद-प्रमोद के लिये वाटिका के पास ही वसन्त ऋतु एवं वर्षा ऋतु के सुख को अनुभव करने के लिये अथवा क्रीडा करने के लिये झूले को बनवाना चाहिये, तथा ग्रीष्म तथा शरद ऋतु के लिए वाला, युवती एवं प्रौढा स्त्रियों के लिये जलक्रीडा के लिए मण्डल का निर्माण करना चाहिये।

कूपनिर्माण - राजा को सुखोपलब्धि के लिए वाटिका के साथ-साथ कूप का भी निर्माण करना चाहिये, वास्तुविद् आचार्यो का निर्देश है कि राज भवन की सज्जा तब और दुगनी हो जाती है जब राजभवन के आस-पास पुष्प, वन, तथा कूप इत्यादि मनोरञ्जन के भी साधन लगायें जाये,और उनको लगाने से वन के पशुपक्षी भी आ जाते है और उनको देखने से राजा तथा उसमें रहने वाली रानियों को सुख की अनुभूति होती है। और उनको बनवाने से पुष्पफल की भी प्राप्ति होती है। उन कूपों के भिन्न – भिन्न नाम वास्तुशास्त्र में बताये गये है। जैसे –

कूपाः श्रीमुखवैजयौ च तदनु प्रान्तस्तथा दुन्दुभिः
तस्मादेव मनोहरश्च परतः प्रोक्तश्च चूडामणिः ।

दिग्भद्रो जयनन्दशकंरमतो वेदादिहस्तैर्मितै –
विश्वान्तैः क्रमवर्द्धितैश्च कथिता वेदादधः कूपिका ।।
(वास्तुराजवल्लभ, अध्याय-4-27)

चार हाथ के कूप का नाम श्रीमुख, पाँच हाथ वाले का नाम विजय, छः हाथ वाले कूप का प्रान्त, सात हाथ वाले का नाम दुन्दुभि, आठ हाथ वाले का नाम मनोहर, नव हाथ वाले का चूडामणि, दश हाथ वाले का नाम दिग्भद्र, एकादश हाथ वाले का जय, बारह हाथ वाले का नाम नन्द, तेरह हाथ वाले का नाम शङ्कर होता है। चार हाथ से छोटे कूप को कूपिका कहा गया है। ये राजा को अपने इच्छावृत्ति के अनुसार बनवाना चाहिये।

5.3.2 राजगृह सज्जा

राजगृह सज्जा कई प्रकार की होती है। उसके द्वारा ही राजा की भी शोभा हुआ करती थी और उस महल अथवा राजभवन की भी, जैसा की हमने देखा की सजावट दो प्रकार से होती है एक बाहरी सजावट दूसरी आन्तरिक सज्जा, बाहरी सज्जा, वाटिका, तडाग, कूपादि के द्वारा होती है जो सज्जा बाहरी तरह से करते हैं परन्तु आन्तरिक सज्जा उससे भी भिन्न होती है अथवा राजमहल के आन्तरिक हिस्से में कौन सी वस्तु कहाँ रखनी चाहिये जिससे राजा के साथ-साथ महल की भी शोभा हो सके। जैसे –

गृहे न रामायणभारताहवं चित्रं कृपाणाहवमिंद्रजालवत् ।
शिलोच्चयारण्यमयं सदासुरं भीष्मं कृताक्रन्दनरं त्वनं वरम् ।।
(बृहदैवज्ञरञ्जन-अध्याय-86-418) (वास्तुसार -अध्याय-9-7)

अर्थात् राजा के महल के आन्तरिक भाग में जो भित्ति होती है उसमें रामायण, महाभारत इत्यादि युद्ध के चित्रों का वर्णन करना चाहिये अथवा लगवाना चाहिये। परन्तु विचित्र मूर्ति, अथवा रोते हुए मनुष्य का चित्र इत्यादि नही लगवाने चाहिये राजा को चाहिये की वह इस प्रकार से भित्ति आदि में चित्र लगवाये जिससे की राजा को सुख की अनुभूति के साथ-साथ युद्ध के लिए भी एक प्रेरणात्मक सीख मिल सके और वास्तुदोषों का भी शमन हो।

1) प्रशस्त वस्तुएँ – राजा को चाहिय़े की वह अपने भवन के आन्तरिक भाग में इन वस्तुओं का चित्रिङ्कान करवाये जैसे –

जो राजपरिवार का कुल देवता हो उसका चित्र भित्ति में लगवाना चाहिये जिससे की राजपरिवार पर उसकी कृपा बनी रहे। तथा उस चित्र का प्रमाण एक हाथ के बराबर हो तो भी दोष नहीं लगता। जैसे –

यस्य यत्र भवेद् भक्तिर्या चास्य कुलदेवता ।
हस्तक्लृप्तप्रमाणेन तान् कुर्वन् स्यान्न दोषभाक् ।।
(समराङ्गसूत्रधार–अध्याय-34-21)

कुलदेवता के चित्र के आस-पास इनते प्रतिहारों को बनाना चाहिये , जो अलंकृत होकर बनाये

जाये। प्रायः ऐसे चित्रों को अधिकतर बनाना चाहिये जिनके हाथ में तलवार आदि अस्त्र धारण करते है साथ – साथ प्रतिहारियों के रूपानुरूप ही शंथ, पद्म जैसे उज्जवल लक्षणों से युक्त द्वारों पर ऐसे चित्रों का अंकन करना चाहिये। जिससे राजा में वह गुण उत्पन्न हों और राज्य की सेवा करने के लिए तत्पर हो। ये सब वस्तुएँ शोभा के साथ – साथ राजा को सुदृढ बनाने में भी मदद करते है।

2) द्वार मण्डल में कलाकृति –

द्वारमण्डलमध्यस्था स्नाप्यमाना गजोत्तमैः।
पद्मासना पद्महस्ता श्रीश्च कार्या स्वलङ्कृता।।

(समराङ्गणसूत्रधार अध्याय -34-28)

भवन के द्वार मण्डल के मध्य भाग में लक्ष्मी का चित्र उत्कीर्ण करना चाहिये, एवम् उसके आस-पास उत्तम हाथियों की सूण्डों द्वारा स्नानाभिषिक्त हो, वे पद्मासना और हाथ में पद्म को धारण करते हुए दर्शायें गये हो , तथा लक्ष्मी के चित्रपट को सम्यक् रूप से अंलकृत किया जाना चाहिये जिससे की वह आकर्षण का भी केन्द्र बने और उसमें आने वाले आकर्षित हो जिससे की राजा की लक्ष्मी के रूप में भी वृद्धि हो। द्वार के आस – पास साण्ड, बछडे सहित गाय को छत्र व मालादि से अलंकृत कर चित्रण करना चाहिये तथा उन भित्तियों में निवेदित करने वाले खाद्य फलों, पुष्पों, इत्यादि का चित्रण करना चाहिये। उक्त प्रकार के पत्र लताओं को गृह की बाहरी और आन्तरिक भित्तियों पर आलेखित किया जाना चाहिये , पत्रलता के चित्रण में हंस , चक्रवाक , सारस, इत्यादि पक्षियों का पद्माकृति के रूप में चित्रण करना चाहिये। जैसे–

चित्रा पत्रलता लेख्या बाह्यभ्यन्तरभित्तिषु।
हंसकारण्डचक्राह्वैर्बिसिनीपत्रवर्तिभिः ।।

(समराङ्गणसूत्रधार – अध्याय – 34-31)

इनके अलावा राजा को गृहद्वार पर कुमार या बालकों को अपनी क्रीडा करते हुए, ललित भुजाओं से युक्त दर्शाना चाहिये। एवं विविध रंगों वाले वस्त्रों से युक्त रतिक्रीडा में संलग्न नारियों को आभूषणों युक्त नायकों से इच्छानुकूल व्यवहार करते हुए दर्शाना चाहिये उससे राजा का मन प्रसन्नचित अवस्था में रहता है राजा को चाहिये कि वह अपने सज्जा में हर वह वस्तु का प्रयोग कर सकता हैं जिससे की उसके मन को आनन्द मिल सके। चित्रमय वातावरण देखकर राजा को वैसे वृक्षों की शाखाओं मय वातावरण बनाने का प्रयास करना चाहिये ऊँची शाखाओं वाले वृक्ष बनाए जिनके अरुणाभ लिए पल्लव चलित सी प्रतीति देते है, अशोक, पुन्नाग ,चम्पक, तथा आम्र, तिलक आदि वृक्षों को सघन छाया, पुष्प व फलों आदि से भरपूर एवम् अन्य वृक्षावलियों से विभूषित करना चाहिये।

(समराङ्गणसूत्रधार , अध्याय- 34-32-35)

अप्रयोज्य वस्तुएँ – राजा सेनापति आदि के भवनों में जो वस्तुएँ अप्रयोज्य बताई गई हैं, इनके विषय में आचार्य विश्वकर्मा बताते है कि राजाओं, सामन्तों सेनापति के साथ-साथ सामान्य मनुष्य के भी गृह में इन वस्तुओं का होना अशुभकर बताया गया है क्योंकि सर्वसामान्य वर्णों के भवनों में , वास्तु कक्षाओं (सभाओं या बैठक स्थानों) में मन्दिर में , शयनस्थान में इत्यादि स्थानो में ऐसे चित्र कलाकृति नही करना चाहिये जिससे की उस चित्र में दर्शाये गये भाव का

प्रभाव राजा अथवा उस में रहने वाले अन्य लोगो पर पडे इसलिये इन वस्तुओं को ना लगवाये और ना ही उनका प्रयोग भित्ति आदि स्थानों में करना चाहिये। जैसे-

दैत्या ग्रहास्तथा तारा यक्षगन्धर्वराक्षसाः ।।5।।
पिशाचाः पितरः प्रेताः सिद्धविद्याधरोरगा ।

चारणा भूतसङ्घाश्च तेषां योषाः सुतास्तथा ।।6।।
प्रतीहाराः प्रतीहार्यस्तेषामधिकृताश्च ये ।
आयुधानि तदीयानि सर्वे चाप्सरसां गणाः ।।7।।

(समराङ्गणसूत्रधार, अध्याय-34-5-7)

अर्थात् – दैत्य, ग्रह, यक्ष, तारा, गन्धर्व, राक्षस, पिशाच, पितर , प्रेत , सिद्ध विद्याधर, नाग, चारण, भूतादि के संघ एवम् उनकी भाषाएँ व पुत्रगण , प्रतिहार, प्रतिहार, व प्रतिहारिणियों , उनके अधिकृत वर्ग, उनके आयुध और उनके साथ विहार करने वाले समस्त अप्सराओं के गण ये सब कभी भी अपने घर के आभ्यान्तर भाग या बाह्यभाग में इनका चित्रण अथवा कलाकृति नही लगवानी चाहिये इससे वास्तुदोषों का प्रभाव बड़ता है क्योंकि यदि हम इन चित्राकृति अथवा कलाकृतियों को लगवाते है तो आवश्य ही वास्तुदोष लगता है और यदि ऐसे चित्रों को लगवाते है चो शुभ बतायें गये है तो यदि वास्तुदोष भी हो तो भी उनके द्वारा नष्ट हो जाते है। इसी प्रकार पाखण्डी , दीक्षित, व्रती, क्षुधा से पीडित, व्याधिग्रस्त, बन्धन, शस्त्र, अग्नि, तेल, कीचड, धूल के कण, शूल, ज्वरादि से पीडित व्यक्ति और मत्त, उन्मत्त, जडबुद्धि, नपुंसक, दृष्टिहीन और बधिरादि जन भी अप्रयोज्य बताये गये है तथा इनके सदृश चित्र भी नही बनवाने चाहिये क्योंकि राज का इन चित्रों से सज्जित रहना है मतलब अपयश अथवा अपकीर्ति का सूचक बताया गया है। जैसे –

रौद्रदीनाद्धुतत्रासबीभत्सकरुणा रसाः ।
न प्राणिषु प्रयोक्तव्या हास्यशृङ्गारवर्जिताः ।।

(समराङ्गणसूत्रधार, अध्याय-34-11)

राजा को भित्ति की सज्जा में इन सबका प्रयोग नही करना चाहिये जैसे- रौद्र रस, दैन्य, अद्धुतरस, त्रास, विभत्स और करुणरसों पर आधारित चित्रादि का निर्माण नही करना , प्राणियों में मनुष्यों का हास्य , श्रृंगार से रहित नही बनाए अर्थात उनमे हास्य व श्रृंगार के अतिरिक्त अन्य रसों का प्रयोग नही करना चाहिये।

समराङ्गणसूत्रधार में इसी प्रकार बताया गया है , घर में गजयान , अश्वयान् , रथयान, विमान एवं मन्दिर सहित अग्नि की लपटों से घिरे हुए भवन और दावानल से घिरे वनखण्ड (लंकादहन, खाण्डवदहन की तरह) को भी वास्तुशास्त्र की दृष्टि में चित्रित करना अथवा कला बनवाना भी अशुभ स्थिति में परिगणित किया जाता है। इसलिये इन सब के भी चित्र अपने भवनों की आन्तरिक एवं बाहरी भित्तियों में नही लगवाने अथवा बनाने चाहिये।

यदि इस प्रकार के चित्र बनवाते है अथवा अंकित करवाते है तो भी वास्तुदोषों का जन्म मानना चाहिये जिसके कारण गृह में अनेकों रोगों का जन्म , व्याधि, कष्ट, धनक्षय आदि उत्पन्न होते है इसलिये इन सब वस्तुओं को त्याग कर जो शुभवस्तुएँ बताई है उनका प्रयोग करना चाहिए। जैसे-

हस्त्यश्वरथयानानि विमानायतनानि च।
चण्डानलप्रदीप्तानि भवनानि वनानि च ।।
(समराङ्गणसूत्रधार, अध्याय-34-12)

5.3.3 राजसज्जा के लिए रखने योग्य एवं ना रखने योग्य वस्तुएँ

ना रखने योग्य वस्तुएँ - ऐसे वृक्ष जो पुष्पों एवं फलों से विहीन हो, अथवा जिनमे ना फल लगते हों ना पुष्प लगते हों और जो वृक्ष एवं पुष्प पक्षियों के निवास से दूषित हो जाते है जिसमे केवल एक ही शाखा हो, द्विशाखीय द्रुभ, रूखेअथवा जिसमे कोई रसादि ना हो, टुटे हुए वृक्ष, सूखे हुए तथा जिन वृक्षों में कोटर बने हों ऐसे वृक्षों को सज्जा के लिए कभी भी प्रयोग नही करना चाहिए जैसे –

वृक्षाः पुष्पफलैर्हीना विहङ्गावासदूषिताः ।।3।।
एकद्विशाखा रुक्षाश्च भग्नाः शुष्काः सकोटराः ।
(समराङ्गणसूत्रधार, अध्याय-34-13)

ऐसे ही कदम्ब, शाल्मली, शेलु, तार, क्षार व लुकादि के पेड और जिन पर भूतालय या प्राणियों का निवास हो, तथा कटु व काँटे वाले वृक्ष भी राजसज्जा के लिए उत्तम नही बताये गये हैं एवं पक्षियों में गीध, उलूक, कपोत, बाज, कौवा जैसे पक्षी और कंक आदि भी प्रशस्त नहीं बताये गये है क्योंकि ये पक्षी इधर-उधर से मांस आदि के टुकडे भी लाकर घर के पास रख देते हैं जिससे वास्तुदोषों का जन्म होता है । खासकर जो रात्रिचर पक्षी हैं, उनको तो कभी भी राजसज्जा के कार्यों में प्रयुक्त नही करना चाहिये जैसे – उल्लू, चमगादड, चितरी आदि।

(समराङ्गणसूत्रधार, अध्याय-34-14-15)

वनचर प्राणियों में हाथी, अश्व, भैसा, ऊँट, बिलाव, गदहे, बन्दर, सिंह, व्याघ्र तरक्षु (नेकडबाघ) सुअर, मृग, जम्बुक (सियार) ये सब राजा को सज्जा में कभी भी प्रयोग नही करने चाहिये क्योंकि इन सबका भय भी बना होता है और साथ-साथ वास्तुशास्त्र में इनको दोष युक्त माना जाता है परन्तु वाटिका आदि विषय इससे इतर बताये गये है इसलिये इनको वाटिका आदि के अलावा सज्जा में प्रयोग नहीं करना चाहिये, इनके अतिरिक्त जो मांसाहारी पक्षी होते है उनको भी गृहसज्जा अथवा सजावट रूप में प्रयोग वर्ज्य बताये गये हैं। ऐसे ही शैल और आटवी क्षेत्र में रहने वाले जानवरों को भी अप्रयोज्य बताया गया है। जैसे –

गजाश्वमहिषाश्चोष्ट्रा मार्जारखरवानराः ।।
सिंहो व्याघ्रस्तरक्षुश्च वराहमृगजम्बुकाः ।

तथा वनचरा ये च क्रव्यादा मृगपक्षिणः ।।
गृहेष्वेते न कर्तव्या शैलाटव्याश्रिताश्च ये ।
(समराङ्गणसूत्रधार, अध्याय-34-16-17)

निषिद्ध बताई गई वस्तुओं को लगाने का फल – यदि इन निषिद्ध प्राणियों को प्रयोजित किया जाए तो अनुष्ठानकर्ता अर्थात् प्रयोग करने वाला व्यक्ति सर्वदा अर्थ से हीन रहता है तथा उस परिवार अथवा राजमहल में सर्वदा व्याधि का वास एवं वे लोग जो उस में निवास करने वाले होते है सर्वदा व्यसन एवं बन्धन में लगे रहते है। इस प्रकार इन निषिद्धों का व्यवहार किया

जाता है तो गृहस्वामी का यन्त्र – तन्त्र सर्वत्र पराजय का सामना एवं नीचा देखना, धन की हानि हर समय होते रहती है। गृह में इन अप्रशस्त वस्तुओं के कारण गृहस्वामी को शीघ्र प्रवास, बन्धन, या सर्वनाश, मृत्यु जैसे परिणाम देखने पड़ते हैं।

(समराङ्गणसूत्रधार, अध्याय -34-18-20)

राजसज्जा में रखने योग्य वस्तुएँ - राजगृह की जो वस्तुएँ सज्जा के लिए बताई गई हैं वह इस प्रकार से है जिसकी भक्ति वह करता हो उसके मूर्ति को एक हाथ प्रमाण का यदि रखता है तो दोष नही माना जाता है तथा भवन के दोनों पार्श्वों पर अलंकृत – प्रतिहारों को नियुक्त करना चाहिए क्योंकि वे दोनों प्राचीन काल में भी राजसज्जा को सुसज्जित करते थे और आधुनिक काल में भी वे द्वारपाल के रूप में प्रतिष्ठित हुआ करते हैं क्योंकि जब कोई राजदरबार में प्रवेश करता है तो वे लोग उस अतिथि का स्वागत एवं सत्कार पहले द्वार पर करते है। सज्जा के लिए वें दोनो अपने हाथ में बेंत की छडी को हाथ में लिए हो , या तलवार आदि शस्त्र उससे उनकी शोभा के साथ-साथ राजशोभा का भी परिचय अतिथि को प्राप्त होता है। उसी के साथ-साथ रूप तथा यौवन से युक्त तथा चित्र-विचित्र वस्त्रों और आभूषणों से सजे हुए होते थे यथा –

हस्तक्लृप्तप्रमाणेन तान् कुर्वन् स्यान्न दोषभाक्।
तद्द्वारपार्श्वयोः कार्यो प्रतीहारौ स्वलङ्कृतौ ॥

वेत्रदण्डव्यग्रकरौ खड्गकोशपरिच्छदौ।
रूपयौवनसम्पन्नौ विचित्राम्बरभूषणौ ॥

(वास्तुसार, अध्याय -9-30-31)

राजा को चाहिये की द्वार सज्जा इस प्रकार से हो कि अतिथि यदि कुत्सित मन से राजदरबार में आया हो तो भी राजसज्जा एवं सत्कार से प्रसन्नचित्त होकर जाये, राजदरबार में सखियों से घिरी हुई , हसाने वाले विदूषकों और कंचुकियों से अनुगत सुन्दर नारी प्रतिहारों को राजद्वार के दोनों पाश्र्वों में नियुक्त करना चाहिये और उनके हाथ में या उनके अनुरूप शंख और कमलादि शुभ पुष्पों का हाथ में लिए रखना राजसज्जा को बढ़ाता है। कलाकृति के मुख से निकलते हुए रत्न और अशर्फियों के ढेरों को धारण करते हुए निधि प्रयोज्य माना जाता है। इसी प्रकार पद्म पर बैठी हुई, पूर्ण कुम्भ वाली, रत्नों और वस्त्रों से विभूषित, टेढे एवं ऊँचे उठे हुए, पुष्प, फल और पल्लव से भरे हुए पूर्णकुम्भ, अंकुश, छत्र, श्रीवृक्ष (बेल) और चामरों से उपलक्षित शंख और मछलियों आदि शुभवस्तुओं की मालाओं से विभूषित अष्टमंगला गौरी का द्वार पर निवेशन करते समय इन वस्तुओं को साक्षात् या कलाकृति में पूरे द्वार के निवेशन स्थान पर रखना चाहिये। द्वारमण्डल के मध्य भाग में स्थित, उत्तम गजों से स्नान कराई जाने वाली, या पद्मों पर बैठी हुई और पद्मों को हाथ में लिए हुए लक्ष्मी की आकृति बनवानी चाहिए जिससे की सज्जा के साथ-साथ शुभलक्षणों युक्त द्वार भी प्रतीत हो सके। प्राचीन काल की एक प्रथा हमे कई जगह आज भी देखने को मिलती है। गाय को अपने बछडे के साथ तथा उन की सज्जा को द्वार पर रखा जाता था। तथा बाहरी एवं भीतरी भित्तियों पर चित्र-विचित्र पत्तलताओं को आलोक्य करना चाहिये जिससे भक्ष्यफल वाले नानापुष्पों एवं फलों से झुके हुए एवं तिरछे स्थित वृक्ष दिखाई पड़ें। साथ-साथ उस पत्रलता में दूसरे चित्रण हों जैसे कमलिनियों के पत्तों पर रहने वाले हंस , चक्र आदि भी सज्जा की प्राधान्य वस्तु है। विचित्र आभूषण और वस्त्र धारण किये हुए और रतिक्रीडा में संलग्न नारियों के चित्रिण में उन्हे पीले शरीर की कान्ति वाली,

थोडी लेकिन सुन्दर भूषणों से सजी हुई, थोडी सी शर्म से झुकी तथा सुरतलालसा से युक्त चित्रित करना चाहिए। जैसे-

रतिक्रीडापरा नार्यो नायकस्तु यदृच्छया।
आपाण्डुदेहच्छवय स्वल्पचारुविभूषणा।।
(वास्तुसार, अध्याय - 9-41)

फल और पुष्पादि के अपने-अपने चिन्हों से अलंकृत तथा सुन्दर समयोचित विशेष पक्षियों से युक्त ऋतुओं का चित्रण करना चाहिए जिससे वे भित्तियाँ सुन्दर भी लगे और राजा के वास्तु दोषों का भी शमन हो तथा उन्नत और ऊँची शाखा वाले पेडों से चलायमान लाल पते वाले चम्पक, पुन्नाग, अशोक आदि प्रकार के, आम तथा तिलक इत्यादि वृक्षों से एवम् अन्य छाया वृक्षों, पुष्पों और फलों से युक्त इस प्रकार से अन्य जो शुभ वृक्ष लगाने का वास्तुशास्त्र में निर्देश है उसको उद्यान में तथा मार्ग आदि के सज्जा में सज्जा के रूप में स्थापित करना चाहिये।

इन सबके अलावा उत्पल सहित जहाँ पर पद्ममिनी के पत्र बिछे हों और जहाँ पर ईक्षु-रस तथा फलादि भोग, मणि अथवा कांचन के बर्तनों में रखे हों, चित्र-विचित्र बाजे बजाने वाले, नाटक अथवा नृत्य कर्ता, प्रसन्न मुख वाले ललनाओं का प्रेक्षा (नाट्य गृह) आदि का राज सज्जा में बहुत महत्त्व बताया गया है राजा को स्वोचित प्रसन्नता के लिए, पिंजडे में बैठे हुए चकोर, तोते और सारिकाएँ एवं प्रहृष्ठ, परपुष्ट (कोकिल), मयूर आदि भी इचछानुसार रखने चाहिये, जितने भी उपयुक्त वस्तु बताई गई है वे सब वस्तु वास्तु शास्त्र में प्रयोज्य कही गई है तथा वे सभी उपकरण भी प्रशस्त बतायें गये है।

जिस तरह से पहले अप्रयोज्य वस्तुओं का उल्लेख किया उसी तरह यहाँ पर प्रयोज्य वस्तुओं का विवरण किया गया है उसी प्रकार दिव्य मनुष्यों की सभा , तथा सम्बन्धित आख्यान और आख्यायिका आदि भी अपने घर के बाहरी एवं भीतरी भित्तियों में आलेख्य आदि शुभ तथा प्रशस्त बताये गये है इसी प्रकार से सज्जा के अन्य स्थलों का भी ध्यान में रखकर सजावट करनी चाहिए जैसे – शयनकक्ष , देवमन्दिर अदि में प्रयोज्य वस्तु बताई गई है उसी का प्योग करके सज्जा करनी चाहिये जो अप्रयोज्य वस्तु बताई है उनका कभी भी प्रयोग नही करना चाहिये चाहे वे वस्तु कितनी ही भी सुन्दर अखवा आकर्षण युक्त हो क्योंकि वे हमेशा वास्तुदोषों को ही उत्पन्न करती है इस प्रकार से अप्रयोज्य वस्तुओं को कभी भई प्रयोग में नही लेना चाहिये।

राजा को राजसज्जा के लिए जों – जों शुभवस्तु अथवा प्रयोज्य वस्तु बताई गई है उसको प्रयोग करके ही करना चाहिये क्योंकि यदि अप्रयोज्य वस्तुओं का प्रयोग करते है तो शरीरव्याधि , घर एवं परिवार में अशान्ति आदि विकृतियाँ देखने को मिलती है इसलिए इनवस्तुओं को वर्जित किया गया है।

अभ्यास प्रश्न

विकल्पात्मक प्रश्न

1. राज प्रासाद की सज्जा कितने प्रकार है ?

   क. 2, ख. 8, ग. 4, घ. 5.

2. राज प्रासादों की भित्तियों में किसका चित्र रहना चाहिए ?

क. गाय, ख. सिंह, ग. शुनक, घ. कौआ.

3. राज प्रासाद की सज्जा के अन्तर्गत जलसम्बन्धि किसका निर्माण करना चाहिए ?

क. नदी, ख. नाली, ग. समुद्र, घ. तालाब.

सत्यासत्यात्मक प्रश्न

1. राज प्रासाद के सज्जा केलिए कण्टक युक्त वृक्ष लगाना चाहिए। यह कथन ---
2. वीररस को द्योतित करने वाले चित्रों को राज प्रासाद की भित्तियों में चित्रित करना चाहिए। यह कथन –
3. रात्रिंचर पक्षियों को भित्तियों में लगाने से दोष होता है। यह कथन –

रिक्तस्थान की पूर्ति

1. निषिद्ध वस्तुओं को प्रयोग में लाने से व्यक्ति सर्वदा ------------- होता है ?
2. रोदन करते हुए व्यक्ति का चित्र भित्ति पर लगाने से ------------- होता है ?
3. भवन के द्वारमण्डल के मध्यभाग में ----------- का चित्र उत्कीर्ण करना चाहिए ?

5.4 सारांश

सारांशरूप में हमने यह जाना की राजसज्जा हमारे जीवन में किस प्रकार से महत्त्वपूर्ण है क्योंकि राजा जब अपने आस-पास बताई गई प्रयोज्य वस्तुओं को प्रयोग करके सजावट करवाता है तो वे अच्छी भी लगती है और वह शास्त्रसम्मत भी हो तो वह सज्जा बहुत ही अच्छी मानी गई है , अप्रयोज्य वस्तुओं का प्रयोग यदि राजा अपनी सज्जि में करता है तो वह भी दुःख का अनुभव करता है तथा पदे-पदे पराजय का सामना करता है इसलिए जिन वस्तुओं को प्रयोज्य बताया गया है उसका ही प्रयोग करना चाहिये । राजसज्जा इसलिये प्रमुख अंग है क्योंकि आचार्यों ने इसको सज्जा शब्द से परिभाषित किया है जिसका अर्थ साक्षात सजावट ही माना जाता है वह सजावट प्रायः तीन प्रकार की है प्रथम राजा के आस-पास उद्यान नदी , तालाब इत्यादि , द्वितीय राजमहल आन्तरिक हिस्सा जैसे की भित्ति , राजदरबार का आन्तरिक हिस्सा , तृतीय राजदरबार का बाह्य हिस्सा जैसे की द्वार , उसके आस-पास का क्षेत्र , मुख्य गमनागमन मार्ग , द्वार की सज्जा इत्यादि के द्वारा ही राजा की शोभा बड़ती है जिससे राजा की कीर्ति भी बड़ती है और राजा का कर्तव्य भी माना जाता है कि वह राजा प्रजारञ्जन के लिए ऐसे उद्यान , तालाब नदी इत्यादि का निर्माण करवाये जिसके साथ वास्तुदोषों का भी शमन हो सके।

5.5 शब्दावली

1. तडाग – तालाब।
2. चित्रांङ्कान – चित्र का प्रदर्शन।
3. भित्ति – दीवार।
4. क्षुदा – भूख।
5. बीभत्स – भयंकर।
6. उत्कीर्ण – चित्रित करना।
7. द्रुम – वृक्ष।

8. जम्बुक – सियार।
9. विदूषक – परिहास करनेवाला।
10. पार्श्व – बगल में।

5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

विकल्पात्मक प्रश्न

1. उत्तर – क.
2. उत्तर – ख.
3. उत्तर – घ.

सत्यासत्यात्मक प्रश्न

1. उत्तर – असत्य है।
2. उत्तर – सत्य है।
3. उत्तर – असत्य है।

रिक्तस्थान की पूर्ति

1. उत्तर – अर्थहीन।
2. उत्तर – पराजय की प्राप्ति।
3. उत्तर – लक्ष्मी का।

5.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. राजवल्लभवास्तुशास्त्रम्
2. वास्तुमण्डनम्
3. वास्तुविद्या
4. मानसार
5. समराङ्गणसूत्रधार
6. अर्थशास्त्र
7. विश्वकर्माप्रकाश
8. विश्वकर्मवास्तुशास्त्रम्
9. महाभारत
10. मनुस्मृति,आदि।

5.8 बोध प्रश्न

1. राज प्रासाद की सज्जा का वर्णन कीजिए ?
2. राजसज्जा के प्रकारों पर प्रकाश डालिए ?
3. राज प्रासाद में उचित अनुचित वस्तुओं पर व्याख्या कीजिए ?

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY